पहली जनवरी.

[घड़ी के अलार्म की आवाज़, साथ ही साथ बीवी जाग उठती है।]

पत्नी—उह हूँह'''उहूँ हूहूँ।

पति—आख्खाह'''आ-आ ''ख़ाह'''।

पत्नी—तौबा है, यह आख़िर आधी रात के लिए अलार्म किसने लगा दिया था ?

पति—आधी रात है यह। ज़रा देखो तो लिहाफ़ से मुँह निकाल कर दिन निकल आया है, छ: बजने को हैं।

पत्नी—मगर यह अलार्म लगाया किसने था ?

पति—मैंने लगा दिया था, परेड देखने जाना है ना।

पत्नी—परेड ?

पति—हाँ परेड। आज पहली जनवरी है ना।

पत्नी—ठीक है आज पहली जनवरी है और तुमने नये साल की मुबारकबाद भी न दी। ख़ैर, मैं ही तुमको नये साल की मुबारकबाद देती हूँ।

पति—तुमको भी नया साल मुबारक ! ख़ुदा करे यह साल हम सबके लिए भागवान गुज़रे !

पत्नी—अच्छा देखो, आज किसी बात पर ग़ुस्सा न करना और न कोई झगड़ा खड़ा करना। नहीं तो पूरा साल इसी किलकिल में गुज़रेगा। समझे कि नहीं ?

पति—मगर एक बात है कि तुम भी आज ग़ुस्सा दिलाने की कोई बात न करना। मैं तो ख़ुद चाहता हूँ हम दोनों इस तरह हँसी-ख़ुशी रहा करें कि दूसरे मियाँ-बीवी हम से सबक़ लें।

पत्नी—मैं ग़ुस्सा दिलाने की कौन सी बात करती हूँ और अगर

कोई बात हो भी जाय तो आदमी टाल दे, मगर तुम तो बाज़ औक़ात लड़ाई के बहाने ढूँढते हो। चलती हुई हवा से लड़ते हो।

पति—इस क़िस्म के मौक़ों पर तुम हँस दिया करो।

पत्नी—हाँ मैं हँस दिया करूँ और तुम ग़ुस्सा किया करो जैसे मैं तो आदमी हूँ ही नहीं।

पति—भला यह भी तो ग़ौर करो कि तुम पर ग़ुस्सा न करूँगा तो किस पर करूँगा और तुम ही मेरे ग़ुस्से को बर्दाश्त न करोगी तो कौन करेगा ?

पत्नी—तो क्या मैं बर्दाश्त नहीं करती हूँ ? मैंने जैसा तुम्हारे ग़ुस्से को बर्दाश्त किया है उसको मेरा ही दिल जानता है।

पति—कहीं भी नहीं। मैंने तो हमेशा यही देखा है कि मेरे ग़ुस्से पर तुमको भी ऐसा ग़ुस्सा आता है कि मैं अपना ग़ुस्सा भूल कर अपनी जान बचाने की फ़िक्र करता हूँ। और तुम ऐसा हाथ धोकर पीछे पड़ती हो कि तौबा ही भली।

पत्नी—और क्या ऐसे ही तो बेचारे नेक हैं। ग़ुस्से में तुमको अगर पलट कर जवाब भी दे दूँ तो आफ़त आ जाय। मैं बेचारी क्या ग़ुस्सा करूँगी।

पति—भई, अगर ईमान की पूछती हो तो बात यह है कि दोनों तेज़ मिज़ाज हैं। और हम दोनों नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते।

पत्नी—हाँ तो मैं यह कब कहती हूँ कि मेरे मिज़ाज में ग़ुस्सा है ही नहीं। मगर ख़ुदा न करे कि तुम्हारी तरह ग़ुस्से में आपे से बाहर हो जाऊँ। अगर मुझमें भी तुम्हारी तरह ग़ुस्सा होता तो एक दिन भी बसर न होती।

पति—यह तो ख़ैर आपकी परवरिश है कि आप मेरे साथ बसर कर रही हैं। मगर आपकी सारी ख़ता यह है कि अपने ग़ुस्से को कभी

ग़ुस्सा ही नहीं समझतीं और मेरी ज़रा सी बात आपके लिए ग़ुस्सा हो जाती है।

पत्नी—अब मेरी ज़बान न खुलवाओ। अगर खरी-खरी कहूँगी तो बुरा मानोगे। मैं तो यह कहती हूँ कि जब तुमको ग़ुस्सा आता है तो कुछ सुझाई नहीं देता। खुदा न करे कि तुम्हारा ऐसा ग़ुस्सा किसी में हो।

पति—वही ना कि मेरा ग़ुस्सा तो ग़ुस्सा है और तुम्हारा ग़ुस्सा गोया कुछ भी नहीं। तुम हमेशा मज़लूम बनी रहती हो। काश, तुमने कभी अपनी ज़्यादती भी समझी होती!

पत्नी—अच्छा तो मैं पूछती हूँ कि कल आख़िर मेरी क्या ज़्यादती थी? मैंने यही तो कहा था कि तुमको अपने दोस्तों के पीछे घर का होश नहीं है।

पति—अच्छा तुम ही बताओ यह कौन सी कहने की बात थी? दुनिया में किसके दोस्त नहीं होते?

पत्नी—होते हैं और ज़रूर होते हैं, मगर यह मैंने कहीं नहीं देखा कि बस सुबह से शाम तक और फिर आधी-आधी रात तक दोस्तों ही में आदमी हा हा-हू हू किया करें।

पति—तुम्हारा मतलब यह है कि मैं सारी दुनिया को छोड़कर बस घर में घुसकर बैठ रहूँ, क्यों?

पत्नी—और तुम यह चाहते हो कि बस घर को छोड़कर और सारी दुनिया से मतलब रहे।

पति—तो तुमने मुझसे इसी तरह समझा कर कह दिया होता।

पत्नी—ऐ और क्या, ऐसे ही तो तुम मेरी सुननेवाले हो! बाक़ी और कुछ कहे तो यह आफ़त आई कि हमसाई तक सोते में उछल पड़ीं...।

पति—इसके माने ये हुए कि हमसाई के डर से अपने घर में कोई बोले ही नहीं। और यह हमसाई का क़िस्सा आपको कैसे मालूम हुआ। उनसे भी मेरे ग़ुस्से का रोना रोया गया होगा।

पत्नी—हाँ क्यों नहीं ? मैं दुनिया भर में तुम्हारे ग़ुस्से का रोना ही तो रोती फिरती हूँ। उन्होंने खुद ही पूछा तो अलबत्ता मैंने भी कह दिया कि ख़फ़ा हो रहे थे।

पति—हाँ, हाँ वह तो मैं पहले ही समझता था कि तुम मुझको बदनाम करने से बाज़ नहीं आ सकती। अपने मैके में मेरा ग़ुस्सा तुमने मशहूर किया। अपनी एक-एक बहन को मेरी बदमिजाजी का रोना रोईं। अब पास-पड़ोस में मेरी दिमाग़ की ख़राबी का डंका पीटो।

पत्नी—देखो, इस वक्त मैके का कोई ज़िक्र न था।

पति—था कैसे नहीं, जब बात पैदा होगी तो कही भी जायगी।

पत्नी—अच्छा तो तुम क़सम खाकर कह दो कि मैंने तुमको बदनाम किया है।

पति—क़सम खाकर कह दूँ, गोया मैं झूठा हूँ, दरोग़गो हूँ, कज़्ज़ाब हूँ!

पत्नी—देखो, अब तुम ही को ग़ुस्सा आ रहा है और बेकार को बात बढ़ रही है।

पति—ग़ुस्सा क्या आ रहा है, जब मिजाज ही खराब है तो ग़ुस्सा आना क्या मानी ? मगर मैंने तो खुद आपके घर में किसी को फ़रिश्ता नहीं देखा। अपने वालिद साहब को देखिए खाने में नमक तेज़ हो जाए तो दस्तरख्वान उलट देते हैं। भाई साहब क़िब्ला हैं कि बारूद के बने हुए हैं। मगर साहब, बदनाम हैं तो हम ही।

पत्नी—आ गया न ग़ुस्सा ? मैं तो पहले ही डर रही थी।

पति—फिर वही ग़ुस्सा ! अरे साहब, यह ग़ुस्सा नहीं वाक़या है कि तुमने मुझको बदनाम किया है, मेरा ग़ुस्सा मशहूर किया है और तुम्हारी वजह से सब मुझको बदमिजाज कहते हैं।

पत्नी—अब तुम ही बताओ कि यह ग़ुस्सा नहीं तो आखिर क्या है? और इसमें मेरे मशहूर करने की क्या बात है। क्या कोई तुम्हारी यह बातचीत नहीं सुनता।

पति—आवाज़ नहीं सुनता, आवाज़ नहीं सुनता। कोई आवाज़ सुनेगा तो मेरा क्या करेगा। जो कोई मुझे कुछ देता हो न दे। तुम्हारे घर वाले मुझको बदमिज़ाज कहते हैं तो समझ में नहीं आता कि बद-मिज़ाज से आखिर ताल्लुकात ही क्यों रखते है ?

पत्नी—वह तो तुम खुदा से चाहते हो कि किसी बहाने ताल्लुक़ात छूट जायें। मगर मैं पूछती हूँ कि आखिर इस वक़्त मेरे घर वालों के ताने क्यों दे रहे हो ? मैंने कभी तुम्हारे घर वालों के लिए एक लफ़्ज़ भी नहीं कहा।

पति—मेरे घर वालों के मुताल्लिक़ तुम क्या कहतीं ? कोई बात होती जब ही तो कहतीं।

पत्नी—अब कहलवाते हो तो सुनो—मेरे वास्ते कौन-सी बात उठा रखी गई। तुम्हारे यहाँ बदमिज़ाज हूँ, फूहड़ मैं हूँ, तुमको मैंने उल्लू बना रखा है। एक ही बात हो तो कही जाए।

पति—मेरे घर वालों में से कोई ऐसी बात नहीं कह सकता।

पत्नी—हां, हां, तुम्हारे घरवाले तो सब बड़े सीधे है। बड़े शरीफ़ और बड़े नेक हैं। बुराइयाँ तो बस मेरे घर वालों में हैं।

पति—बेशक ! इसमें क्या कुछ झूठ भी है ! तुम्हारे मैके में छोटे से लेकर बड़े तक सबको मैंने खूब समझा है।

पत्नी—खुदा की मार है मुझ पर कि मेरी वजह से मेरे मैके वाले ख्वामख्वाह बटोरे जा रहे हैं। खुदा मुझको मौत भी तो नहीं देता कि क़िस्सा ही पाक हो जाये।

पति—मेरे ज़ुल्म ही इतने ज्यादा हैं कि इन बेचारी के लिए सिवाय मौत के कोई चारा नहीं।

पत्नी—मालूम नहीं किस दिन मेरे मैके वालों ने तुम्हारी बदमिज़ाजी की शिकायत की थी। अलबत्ता अपने ग़ुस्से का चर्चा मैंने तुम्हारे यहाँ बच्चे-बच्चे की ज़बान पर सुना है। अभी कल वह टाँग बराबर का

छोकरा बशीर कह रहा था कि भाभीजान ने तो भाईजान को दबा लिया है।

पति—तो क्या झूठ कहता है ? देखता नहीं है वह कि बराबर से लड़ती हो। तुमको तो शायद यही तालीम दी गई है कि शौहर को जूती की नोक पर रख कर मारना।

पत्नी—हाँ तो यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हारी शै पाकर ये छटाँक-छटाँक भर के बच्चे तक मुझसे जो चाहते हैं कहते हैं।

पति—ख़ैर तुम्हारे यहाँ तो मन-मन भर के बुड्ढे मेरी बदमिज़ाजी का रोना रोते हैं। अरे साहब, मेरा ग़ुस्सा तेज़ है, मैं बदमिज़ाज हूँ, मेरा दिमाग़ खराब है तो मुझको मेरे हाल पर पड़ा रहने दें। अगर किसी के आगे हाथ फैलाऊँ तो जो चोर की सजा वह मेरी।

पत्नी—अब तुम इतनी ज़ोर-ज़ोर से चीख़ रहे हो तो जो कोई सुनेगा क्या कहेगा ? यही ना कि ग़ुस्सा कर रहे हो।

पति—यह मैं ग़ुस्सा कर रहा हूँ ?

पत्नी—तो मुझे क्या मालूम कि ग़ुस्से की तरह तुम्हारी ख़ुश-मिज़ाजी भी होती है और इस तरह तुम मज़ाक़ किया करते हो।

पति—मैं मज़ाक़ नहीं कर रहा हूँ, सच कह रहा हूँ कि तुमने मेरे ग़ुस्से का ढिंढोरा पीटा है। तुमने तमाम दुनिया में मुझको बदनाम किया है और तुम्हारी ही वजह से मैं बदमिज़ाज मशहूर हूँ।

पत्नी—अच्छा अब तुम ही बताओ कि इस वक़्त ग़ुस्से की कौन-सी बात थी ?

पति—ग़ुस्से की बात, फिर वही ग़ुस्से की बात ! अरे साहब ग़ुस्से की बात यही है की आप इसको ग़ुस्सा कहती हैं।

पत्नी—तौबा है अल्लाह ! ग़ुस्सा करते जाते हैं और फिर यह भी मुसीबत है कि इसको ग़ुस्सा न कहो।

पति—नहीं, कहो ज़रूर कहो ! मुझे तो देखना यह है कि तुम

मुझको बदनाम करके आखिर पाओगी क्या, और मेरा बिगाड़ क्या लोगी ?

[सिराज और मिसेज़ जमीला सिराज दाखिल होते हैं।]

सिराज—अरे भई, बग़ैर पूछे हम आ सकते हैं ?

जमीला—बग़ैर पूछे आने वाले जो शर्मिन्दा होना नहीं चाहते, यही कहते हैं।

सिराज—मगर यह वाक़्या क्या है ?

जमीला—शायद हम लोग मुखिल हुए।

सिराज—नहीं साहब, यहाँ तो दोनों तरफ़ निगाहों में शोले, अबरू पर बहुत सी शिकनें और नथने फूले हुए नज़र आ रहे हैं। ये आसार तो वर्जिश के हो सकते हैं। वर्ना कुछ खटपट हुई है।

जमीला—क्यों बहन शकीला, क्या बात है आखिर ?

शकीला—कोई बात नहीं बहन।

सिराज—अमाँ रशीद, आखिर वाक़्या क्या है ?

रशीद—कुछ भी नहीं, आओ बैठो।

जमीला—कुछ है ज़रूर चाहे कहो नहीं। मगर हाँप रही हो बहन तुम।

शकीला—कुछ भी नहीं, योंही ज़रा तबियत ख़राब है।

सिराज—यार रशीद तुम भी तो कुछ हाँप-से रहे हो।

रशीद—हाँ, शायद सर्दी लग रही हो। और कोई बात नहीं।

जमीला—मैं कहती हूँ ज़रूर कोई बात है। तुम्हारी आँखों से शिकायत बरस रही है। चेहरा भी तमतमा रहा है।

शकीला—अभी सोकर उठी हूँ, शायद कोई ऐसा-वैसा ख्वाब देखा हो।

सिराज—रशीद, तुम छिपाने की कोशिश न करो, ज़रूर झड़प हुई है। तुम संभलने के बावजूद अब तक बिफरे हुए हो।

रशीद—अमाँ कुछ नहीं, इनकी आदत है कि मेरी ज़रा-सी बात को ग़ुस्सा कह देती हैं। और तमाम दुनिया में मेरे ग़ुस्से का ढिंढोरा दिन-रात पीटा करती हैं।

शकीला—देखो बहन जमीला, यह मैं ढिंढोरा पीट रही हूँ। ख़ुद अपने ग़ुस्से का नमूना दिखाया जा रहा है।

सिरोज—औरतें होती तो बड़ी प्रोपेगण्डाबाज़ हैं ख़ुदा ही इनकी प्रोपेबाज़ी से बचाए।

जमीला—बस रहने भी दीजिए। मेरे सामने यह ऊटपटाँग न हाँकियेगा। मैं ख़ूब जानती हूँ कि मर्द हमेशा मर्द ही की हमदर्दी करता है।

सिराज—तो मैं कुछ कह थोड़ी रहा हूँ। हाँ भई रशीद, तो तुम ही ग़म खाओ। मुझको देखो कि किस तरह पस्पाई में ख़ुश रहता हूँ।

जमीला—यह है वही। वह तुम क्या कह रहे थे—प्रो•••।

सिराज—प्रोपेगण्डा•••।

जमीला—हाँ प्रोपेगन्डा। गोया मैं तुम पर ज्यादती करती हूँ और तुम मेरी ज्यादतियाँ बरदाश्त करते हो। मैं ज़ालिम हूँ और तुम मज़लूम हो। उफ़्फ़ो री मर्द की चालाक ज़ात, ज़रा-सी बात में कितनी बड़ी बात कह गये। अरे तुमको बेचारे क्या देखेंगे। तुमको तो कोई मेरी आँखों से देखे।

सिराज—अब तक कहा जाता था कि लैला को मजनूँ की आँखों से देखना चाहिए, मगर आप यह फरमाती हैं कि मजनूँ को लैला की आँखों से देखो।

जमीला—कलेजे में चुटकी ले ली और अब मज़ाक़ कर रहे हैं। आप पस्पा हैं, मैंने पस्पा किया है आपको? मैं पूछती हूँ कि यह आपने कहा कैसे?

सिराज—अरे छोड़ो भी इस क़िस्से को। योंही कह दी एक बात।

अगर यह कोई सख्त बात है तो वापस लेता हूँ मैं। मगर तुम तो खुद ज़रा-सी बात पर बिगड़ कर अपनी नाज़ुक मिज़ाजी का नमूना पेश करने लगीं।

जमील—हाँ, यही तो मैं कहलवाना चाहती थी कि सबसे पहले तो तुम खुद ही मुझको नाज़ुक मिज़ाज समझते हो। जब ही तो तुम्हारे तमाम घरवाले मुझको बम का गोला समझते हैं।

सिराज—बम का गोला ?

जमीला—हाँ हाँ बम का गोला ! क्या मैं बहरी हूँ, सुनती नहीं हूँ कि मेरी बदमिज़ाजी का घर भर में चर्चा है। घर वाले आये-गये तक मेरी बदमिज़ाजी पर नाम रख जाते हैं। कल तहसीलदार की बीवी ने सबके सामने कहा कि बहू का मिज़ाज ज़रा तेज़ है।

सिराज—फिर आपने क्या कहा ?

जमीला—मैं क्या कहती। पहले तो चुप रही फिर जब मैंने देखा कि सभी सुनकर चुप हो रहे तो इतना ज़रूर कहा कि अपने लिए ज़रा नेक मिज़ाज बहू ढूँढ कर लाइयेगा।

सिराज—गोया आपने तस्दीक़ कर दी।

जमीला—यह···उनकी बात कोई न हुई और मेरी बात बद-मिज़ाजी की तस्दीक़ हो गई। वह तो मैं कह ही रही हूँ कि सबसे ज्यादा मुझको बदमिज़ाज समझते हो।

शकीला—हटाओ भी बहन, तुम ही चुप रहो। मुझे देखो कि सब कुछ सुनती हूँ। सुनते-सुनते कलेजे में ज़ख्म पड़ गये हैं, मगर चुप हूँ।

रशीद—फिर तुमने वही बात कही। मैं कहता हूँ कि तुम आख़िर कलेजे में ज़ख्म क्यों डाल रही हो। मेरी बदमिज़ाजी अगर बर्दाश्त नहीं होती तो मैं आज से बाहर रहा करूँगा।

शकीला—आप तो बे बात-की-बात पैदा करते हैं। यहाँ आख़िर आपका ज़िक्र था जो आप बाहर रहने के लिए तैयार हो गये ?

रशीद—मेरी आँखों में धूल झोंकती हो। मुझको गधा समझती हो। मैं अँधा हूँ? आखिर तुम अभी क्या कह रही थीं?

शकीला—मेरा मतलब तो यह था कि दुनिया की ज़बान को कोई नहीं रोक सकता। मगर आपको तो आ रहा है इस वक़्त ग़ुस्सा, हर बात अपने ही ऊपर ले जाते हैं।

रशीद—फिर वही ग़ुस्सा? ग़ुस्सा, ग़ुस्सा, ग़ुस्सा! ग़ुस्सा न हुआ तुम्हारा वज़ीफ़ा हो गया।

शकीला—अच्छा तो आप बता दीजिए ग़ुस्से को क्या कहा करूँ।

रशीद—तो यह ग़ुस्सा कर रहा हूँ?

शकीला—अब मैं क्या बताऊँ, मैं तो ज़रा-सी बात कह कर गुनहगार हो जाती हूँ। अब जो आप कहिए वही कहूँ?

सिराज—अमाँ छोड़ो भी इन बातों को। ये बातें न अब तक तै हुई हैं न तै होंगी। इन बातों को तो मेरी तरह हँस कर टाल दिया करो।

जमीला—यह बेचारे इन बातों को हँस कर टाल दिया करते हैं। बड़े नेक हैं, और मैं हमेशा यही बातें किया करती हूँ। बस इन की वजह से लड़ाई टला करती है।

सिराज—लाहौल वला क़ूवत! आप फिर बुरा मान गईं। मेरा मतलब तो यह है कि मियाँ-बीवियों में यह छेड़छाड़ चली ही जाती है। जिस तरह खुद अपने यहाँ मैं कभी-कभी चुप हो जाया करता हूँ उसी तरह इनको भी चुप होने का मशवरा दे रहा हूँ।

जमीला—वही तो मैं कह रही हूँ कि गोया तुम्हारी वजह से हमारे घर की लड़ाई टला करती है, यही तो तुम कह रहे हो?

सिराज—अच्छा तो अब आप जो कुछ कहिये वह कहूँ। मैं अगर अपनी तरफ़ से कुछ और कहूँगा तो उसके मानी खुदा जाने क्या हो जायेंगे।

जमीला—मैं तो ज़बरदस्ती मानी पैदा करके तुमसे लड़ाई करती हूँ। ख़ुदा ग़ारत करे मुझ लड़ने वाली को !

सिराज—अरे-रे-रे···लाहौल वला-क़ूवत! ख़ुदा के लिए यह कोसा-काटी शुरू न करना। मेरा मतलब तो यह था कि अच्छा ख़ैर कुछ नहीं मुझ से ग़लती हुई।

शकीला—बस बहन, बस । देखो तो वह किस तरह मर्द होकर तुम्हारी बातों को टाल रहे हैं।

रशीद—यानी यह कि नहीं टालता हूँ तो एक मैं। दुनिया के मर्दों में बदतरीन मर्द मैं हूँ। हरेक में इनको ख़ूबी नज़र आ सकती है, मगर मैं तो ऐसा गया-गुज़रा हूँ कि मुझमें कोई ख़ूबी नहीं।

शकीला—लो और सुनो। ऐ मैं कहती हूँ कि क्या ज़बान में ताला डाल लूं, होंठ सीकर बैठ रहूँ ? अच्छा अब मैं एक लफ़्ज़ भी न बोलूँगी।

सिराज—भई रशीद, अब अगर तुम बोले तो यह तुम्हारी ज्यादती होगी। भाभी ने इस वक़्त अपनी तरफ़ से क़िस्से को ख़त्म कर दिया है।

जमीला—मैं जानती हूँ कि यह तुम मुझे सुना रहे हो । मगर मैं औरत को इतना गिरा हुआ नहीं देख सकती और न ख़ुद इतना गिर सकती हूँ, समझे कि नहीं ?

सिराज—यानी आपका यहाँ क्या ज़िक्र था और आपसे गिरने के लिए कहा किस नामाक़ूल ने है ? आपके लिए तो ख़ुदा मुझको गिरने को सलामत रखे।

जमीला—तुम अपना टट्टू आगे ही रखो और अपने को बराबर नेक साबित किये जाओ।

सिराज—लीजिये साहब, जो कुछ मैंने कहा था उसका तर्जुमा गोया यह हुआ। अच्छा साहब फ़र्ज़ कर लीजिये कि मैं अपने को नेक ही साबित कर रहा हूँ तो इससे आपको क्यों परेशानी होती है ?

रशीद—नहीं समझे तुम, बड़े कोदन हो। क़िस्सा दरअसल यह है कि अगर तुम नेक साबित हो गये तो लड़ाई की जड़ गोया तुम्हारी बीवी क़रार पायेंगी और अगर वह नेक हैं तो तुम।

शकीला—यही क़िस्सा तो हमारे यहाँ भी है।

रशीद—ग़लत कहती हो तो तुम, यह क़िस्सा हमारे यहाँ नहीं है। हमारे यहाँ तो मुसीबत यह है कि तुम्हारी खामोश हरकतों को कोई देखने नहीं आता और मेरी आवाज़ दूर ही से लोग सुन लेते हैं।

सिराज—खैर अपने यहाँ का मामला तो मैं बिलकुल समझ गया कि आइन्दा से मुझको यह कहना चाहिए कि मैं बड़ा बद-मिज़ाज हूँ।

शकीला—और मुझको हरेक से यह कहना चाहिए कि यह जो कड़कदार आवाज़ आप सुनते हैं वह इनकी नहीं दरअसल मेरी होती है।

रशीद—यह है वह चुटकी जिसको देखने न तुम्हारी हमसाई आयेंगी न घर का कोई आदमी। अलबत्ता सब मेरा ग़ुस्सा देख लेंगे और मेरी ही बदमिज़ाजी का सबको यक़ीन आयगा।

जमीला—अफ़सोस तो यह है कि परेड देखने जाना है, नहीं तो मैं आज इस क़िस्से को हमेशा के लिए तै करके उठती कि ज्यादती मेरी तरफ़ से होती है, या इनकी तरफ़ से। यह हमेशा भीगी बिल्ली बनकर अलग हो जाते हैं और मुझको नक्कू बनवा रखा है।

रशीद—परेड अब कहाँ रखी? इस परेड ही कम्बख्त ने तो आज नया साल इस शगुन के साथ शुरू किया है।

शकीला—मैंने पहले ही कह दिया था कि देखो आज कोई बात ऐसी न हो कि ग़ुस्सा आये, नहीं तो पूरा साल इसी तरह गुजरेगा।

सिराज—और यही मैंने इनसे कहा था मगर......।

जमीला—देखो जी फिर तुमने अपना जिक्र किया। तुमने यह कहा था कि आज नया साल शुरू हो रहा है, आज ज़रा नाक पर बैठने वाली मक्खी से होशियार रहना। यह तो और भी छेड़ना हुआ।

रशीद—और इन बेगम साहबा का मतलब क्या था, यही कि तुम्हारा गुस्सा तो गोया जरूरत में से है। मगर आज न आये तो अच्छा है। इसके मानी यह होते गुस्से में कहा हो तो आये। [नौकर दाखिल होता है।]

नौकर—बेगम साहब चाय, तैयार है।

शकीला—तो मैं क्या करूँ, साहब से कहो।

रशीद—फेंकदे जाके चाय चूल्हे में। दूर हो यहाँ से। गया या कुछ लेकर जायगा ?

[नौकर जान बचा कर भागता है।]

शकीला—मैं कहती हूँ कि आख़िर चाय ने क्या बिगाड़ा है ?

सिराज—यही मैं भी ग़ौर कर रहा था कि आज घर पर चाय नहीं मिली तो क्या यहाँ भी न मिलेगी ?

जमीला—घर पर तो तुम्हें कभी कुछ मिलता ही नहीं है फ़ाक़े करते हैं बेचारे क्या करें ! जो कोई सुनेगा वह क्या कहेगा, यही ना कि बीवी बेढंगी है।

सिराज—मेरा मतलब यह था कि······।

जमीला—मैं मतलब-वतलब कुछ सुनना नहीं चाहती। तुम्हारा जितना जी चाहे बदनाम करलो। आख़िर मैं पूछती हूँ कि तुमसे किसने कहा था कि चाय न पियो।

रशीद—तो तुम चाय पीलो ना सिराज।

शकीला—आप चलिये तो वह भी पियेंगे।

रशीद—मेरा इस वक्त चाय पीने को दिल नहीं चाहता।

सिराज—मैं तो यों ही कह रहा था मज़ाक में चाय तो मैं पीकर आया हूँ।

जमीला—ग़लत कहते हो तुम मुझको कपड़े पहनने में ज़रा देर हो

गई तो कहने लगे परेड ख़त्म हुई जाती है। हथेली पर सरसों जमाकर वहाँ से चले आये और अब चले हैं बातें बनाने।

शकीला—तो चलिये ना आप सब,चाय आख़िर तैयार ही रखी है।

रशीद—चलिये चलता हूँ, आपने कलेजा जितना ठण्डा किया है, उसको अब चाय से मोतदिल बनाने के लिए चलता हूँ।

शकीला—उठो जमीला बुरी बात है कहना भी मान लिया करते हैं। आइये सिराज साहब। [सब उठकर डाइनिंग हाल में जाते हैं। मेज़ पर प्यालियों की खड़बड़-खड़बड़ सुनाई देती है और रशीद फिर न्द आवाज से कहता है।]

रशीद—कल्लू, कल्लू! किधर है आख़िर कल्लू?

शकूर—सरकार, मैं चाय ला रहा था।

रशीद—देख तो सही यह प्याली है?

शकूर—नई प्यालियाँ बेगम साहब ने रखवादी हैं, बाहर निकली हुई यही हैं।

रशीद—और बेगम साहब ने मना कर दिया है कि इन प्यालियों को भी धोना नहीं? क्यों देख इसे आँखें खोलकर।

शकूर—सरकार अभी साफ़ करके सब प्यालियाँ रखी हैं।

शकीला—जाके फिर साफ़ कर इसे।

रशीद—अब आपको ख़याल आया है! नौकर भी देखते हैं कि जब घर की मालिका का यह हाल है तो उनको काम करने की क्या ज़रूरत है।

सिराज—घर की मालिका की तवज्जो बड़ी ज़रूरी है।

जमीला—क्या मतलब इससे तुम्हारा? मैंने किस दिन तुम्हारे यहाँ तवज्जो नहीं की थी।

सिराज—ऐ सुभान अल्लाह, यानी आप हवा से लड़ रही हैं। आपका यहाँ क्या ज़िक्र था?

जमीला—अरे मैं ख़ूब समझती हूँ तुम्हारे इन छींटों को। मुझसे बातें तो बनाओ नहीं। मगर इतना जानती हूँ कि एक दिन मैं घर में न हूँ तो पता चले।

रशीद—अब मेरा मुँह क्या देख रहा है, हटा यहाँ से इस प्याली को, नहीं तो ले।

[प्याली उठाकर फेंक देता है और वह टूट जाती है।]

शकीला—अब यह भी ग़ुस्सा नहीं है तुम्हारा ? पूरा सेट ख़राब गया या नहीं ?

रशीद—ग़ुस्सा अगर है तो जाओ ग़ुस्सा ही सही। नौकरों को भी सिर पर चढ़ा लिया जाय तो तुम समझो कि ग़ुस्सा नहीं है। मैं इन सब प्यालियों को इस वक़्त उसके मुँह पर मार दूँगा। गधा, नमकहराम चोर निवाला हाज़िर।

शकीला—मगर इस कम्बख़्त का क्या गया, नुक़सान तो अपना हुआ कि सेट ख़राब गया। अब क्या इसके साथ की प्याली मिली जाती है।

रशीद—चली वहाँ से! सेट ख़राब हो गया तो क्या मैं इस गन्दी प्याली में चाय पी लेता। तुम तो चाहती हो कि कुत्तों के बर्तन में मुझको खाने को दिया जाय और मैं चुप रहूँ।

शकीला—अच्छा ख़ैर होगा, अब इस वक़्त तुमसे कौन बोले।

रशीद—हाँ, यानी इस वक़्त मुझ पर भूत सवार हैं। पागल हो गया हूँ, मुझे कुत्ते ने काट लिया है।

शकीला—अच्छा तो तुम इस प्याली में पीलो ना, यह साफ़ है।

रशीद—मैं अब किसी मैं न पिऊँगा। बस पी चुका और पिला चुकीं तुम।

शकीला—भला कोई बात भी है। देखिये सिराज साहब, वे बात-की-बात पैदा कर लेते हैं और फिर ख़ुद ही बुरा भी मानते हैं।

रशीद—सुनलो सिराज, तुमको मुतवज्जा किया जा रहा है। तुम्हारी अदालत में यह रहम की दरख्वास्त है। और इससे यह भी साबित होता है कि आप मजलूम यानी मै जालिम हूँ।

शकीला—तौबा है, कहाँ से कहाँ बात पहुँच जाती है।

रशीद—तुम्हारी बात बस मेरे दिल तक और मेरी बात हमसाई के कानों तक। तुम्हारे मैके वालों की जबान तक और जहाँ तक तुम चाहो।

शकीला—फिर वही कम्बख्त मैके वाले? अच्छा कह लीजिये जो जी चाहे।

सिराज—मेरे खयाल में गुस्से की गर्मी चाय को ठण्डा कर देगी।

जमीला—हाँ तुमको तो घर पर चाय मिली ही नहीं है ना? तुम हर तरह अपनी बदहवासी दिखाओ।

सिराज—यानी मैं बोला और आफ़त आई। अच्छा साहब कम से कम मै कुछ न बोलूँगा।

जमीला—आफ़त कहो, क़यामत कहो, मुसीबत कहो तुम ही तो मेरी बात का बतंगड़ बनाते हो।

रशीद—लो सिराज, तुम चाय पियो। [चाय उँडेलता है और यकायक कुछ याद आ जाता है तो नौकर को आवाज़ देता है। कल्लू दौड़ता हुआ आता है।]

रशीद—कल्लू, ओ कल्लू! फिर ग़ायब हो गया।

कल्लू—सरकार, मैं प्याली साफ़ कर रहा था।

रशीद—प्याली के बच्चे, मैं कहता हूँ क्या आज खाली गरम पानी पिलायेगा? कहाँ हैं बिस्किट, मक्खन, टोस्ट? क्या खाया जायगा तेरा सर?

कल्लू—जी हाँ, निकालता हूँ बिस्कुट। बेगम साहब, कुंजी दीजिये।

रशीद—अबे कुंजी के बच्चे, अब निकालने चला है? मगर तेरा क्या क़सूर है जब कुंजी ही वह लिये बैठी हैं तो तू क्या करे।

सिराज—साहब, इस कामले में हमारे यहाँ अच्छा इंतेज़ाम है। कुंजी-ताले का झगड़ा ही नहीं रखतीं।

जमीला—हाँ हाँ, मैं तो बेढंगी हूँ। हर चीज़ खुली पड़ी रहती है। जो जिसका जी चाहे ले जाये। तुम्हारे घर में मेरी वजह से लुहस पड़ी रहती है। ख़ूब घुमा-फिराकर बात की जाती है।

सिराज—लीजिये, यक न शुद दो शुद! हम अपने नज़दीक तारीफ़ कर रहे थे। मगर क़िस्सा यह है कि हैं दरअसल बेग़ैरत कि बग़ैर बोले भी चैन नहीं। लाहौल वला-क़ूवत!

जमीला—लाहौल भेजो या कुछ, मगर मैं तुम्हारी एक-एक बात को ख़ूब समझती हूँ।

सिराज—इतना तो मैं भी कहूँगा कि या तो मुझको बात करना नहीं आती या हर बात का बुरा पहलू निकालने में तुम को कमाल हासिल है।

रशीद—नहीं साहब, क़िस्सा यह है हमारे यहाँ कि अशरफ़ियाँ लुटती हैं और कोयलों पर मुहर। अब कौन पूछे कि साहब इन बिस्कुटों और मक्खन को ताले में रखने की क्या ज़रूरत थी?

शकीला—ताले में न रखूँ तो क्या करूँ? सब नौकर-चाकर अपनी ख़ुशी से जो चाहें उड़ायें। और वक़्त पर अगर कोई चीज़ न मिले तो फिर तुम ही ज़मीन-आसमान एक कर दो।

रशीद—यानी वल्लाह, मुझको पागल समझा जाता है। ज़मीन-आस्मान एक कर दो! मतलब यह कि मेरे डर की वजह से यह सब कुछ हो रहा है।

शकीला—तुम तो भूल जाते हो। अभी परसों मक्खन नहीं था तो तुम ही ने आफ़त मचा दी थी। छुरी अलग फेंकी और मक्खन का बर्तन अलग फोड़ा। [बहुत ज़ोर से]

रशीद—सुनादो, पूरा क़िस्सा सुनादो। और नमक-मिर्च लगाकर सुनादो। सिराज और जमीला ने परसों का क़िस्सा नहीं सुना है, इनको वाक़ई सुनाना चाहिये।

शकीला—देखो, देखो इतनी बुलंद आवाज़ में न बोलो! फिर मैं कहूँगी कि तुम खुद अपने ग़ुस्से को शोहरत देते हो।

रशीद—मैं अपना सर पीट लूँगा। इस वक़्त आख़िर तुम्हारा मतलब क्या है और तुम चाहती क्या हो? क्या मैं निकल जाऊँ इस घर से?

शकीला—मैं कुछ नहीं चाहती और न मैं अब कुछ कह रही हूँ। लो ये हैं बिस्कुट-विस्कुट! इतनी सी देर के लिए यह आफ़त भी आना थी।

रशीद—यह बात, वह बात और फिर एक चुटकी। क्या आफ़त तुम पर है? पहले तुम यही तै करलो उसके बाद चाय पियो।

सिराज—अमाँ, हटाओ भी इस क़िस्से को, लो पियो चाय।

जमीला—हाँ, इन बातों में देर हो रही है और बेकार इनको भी चाय जा रही है।

सिराज—फिर वही? अरे साहब, मेरा मतलब इस क़िस्से को टालने से है। और आप गोया मुझ पर खार खाये बैठी हैं।

जमीला—मैं तो तुम पर हमेशा खार खाये बैठी रहती हूँ। फिर तुम बेकार इस मुसीबत को अपने साथ-साथ रखते हो?

सिराज—अरे तौबा, भई खुदा गवाह है। जो मेरा यह मतलब हो।

शकीला—लो जमीला, हटाओ। हटाओ भी इन बातों को, चाय पीलो। लो यह बिस्कुट लो।

जमीला—मैं भूख से बदहवास थोड़े ही हूँ। इनको दीजिये।

सिराज—लो रशीद, बस अब तुम पियो चाय। खत्म करदो यह क़िस्सा।

रशीद—हो चुका ख़त्म यह क़िस्सा। यह क़िस्सा मुझको ख़त्म करके ख़त्म होगा।

शकीला—ख़ुदा न करे! अब देखिये ये कोसने शुरू हुए।

रशीद—मैं अपने को कोस रहा हूँ। और अपने को कोसना गोया तुमको दुआ देना है।

शकीला—यह तो ख़ुदा ही जानता है और इसका इन्साफ़ ख़ुदा ही के हाथ है कि······।

रशीद—हाँ हाँ, अगर मैं तुम्हारे साथ बे इन्साफ़ी कर रहा हूँ तो ख़ुदा का ग़ज़ब टूटे मुझ पर!

सिराज—अरे यार, मानोगे नहीं तुम? लो पियो।

रशीद—नहीं भाई, मैं नहीं पियूँगा इस वक़्त।

शकीला—तुम्हारी वजह से फिर कोई भी नहीं पीयेगा।

रशीद—लो मैं दफ़ान हुआ जाता हूँ, लो।

[रशीद जाता है, शकीला उसके पीछे जाती है।]

शकीला—अरे सुनो तो सही। ठहरो तो, बात तो सुनो। [अवकाश]

सिराज—देख रही हो?

जमीला—ख़ूब देख रही हूँ।

सिराज—इसको कहते हैं ग़ुस्सा। और तुम हो कि मेरे ही ग़ुस्से को कहती हो।

जमीला—नहीं, तुम्हारे ग़ुस्से को क्यों कहूँगी, मैं तो ख़ुद अपने ग़ुस्से को सुनती हूँ।

सिराज—मगर तुमने देख लिया कि ग़ुस्सा इसको कहते हैं। मैंने कम-से-कम कभी कोई बर्तन नहीं तोड़ा ग़ुस्से में।

जमीला—हाँ तो अब यह अरमान भी पूरा कर लो। मगर तुम तो बड़े नेक मिजाज हो। तुमको ग़ुस्से से क्या मतलब।

सिराज—मगर तुम तो बदमिजाज कहती हो!

जमीला—मैं तो सिर्फ़ बदमिजाज ही कहती हूँ, और तुम तो मेरी एक-एक बात का रोना रोते फिरते हो। आज चाय नहीं मिली तो यह कहा है, कल यह भी कह देना कि बीवी खाने को नहीं देती।

सिराज—मगर यह तो ग़ौर करो कि मैंने रशीद की तरह उल्टी खुशामद नहीं कराई।

जमीला—रशीद साहब खुद बदनाम हो रहे हैं, तुम्हारी तरह नहीं कि खुद अच्छे रहें और बीवी को बदनाम करते फिरें। उनकी तेजी तुम्हारे घुन्नेपन से अच्छी है।

सिराज—यह भी अपनी-अपनी क़िस्मत है कि बावजूद प्याली तोड़ने के वह अच्छे रहे और मैं बुरा। वैसा ही मैं भी होता तो पता चलता।

जमीला—दूसरे के घर पर कहते हुए शर्म तो नहीं आती कि चाय नहीं मिली? अब चले हैं बातें बनाने।

सिराज—तो क्या हुआ, आखिर यहाँ तकल्लुफ़ ही क्या था?

जमीला—तो तुम ही पियो चाय, मैं तो हरगिज न पिऊँगी। और अब तुम हमेशा यहीं पिया करो चाय। मैं तो इस वक्त तुम्हारे साथ आकर पछताई।

[जमीला उठकर जाती है, सिराज उसके पीछे जाता है।]

सिराज—और चलीं कहाँ, सुनो तो सही। ठहरो तो, बात तो सुनो।